Chapter-1

प्रथम परिच्छेद

पृष्ठभूमि एवं परिचय :–

मध्यकालीन संत –साहित्य की परंपरा में कबीर , दादू दयाल एवं अखा का महत्वपूर्ण स्थान है । तत्कालीन कठोर साधनाओं से हटकर इन कवियों ने सहज और सरल उपासना पद्धति का प्रचार किया । इन कवियों का जन्म जिस समय हुआ उस समय देश की परिस्थिति अत्यन्त शोचनीय थी । समाज में धर्म वर्ण ,वर्ग ,और जाति के नाम पर अत्याचार फैले थे। कबीर की रचनाओं में हम इन सब की आलोचना देख सकते हैं । लेकिन उनकी वाह्याचार मूलक आलोचना का मूल ध्येय समाज सुधार या जाति गत विसंवादो में एकता का कार्य करके समाज सुधारक बनना नहीं था । उनका मूल ध्येय आत्मा की उन्नति का मार्ग बताकर जन्म –मरण के चक्कर में फॅसी हुयी आत्माओं का परमात्मा के साथ मिलाप कराना था । ताकि मनुष्य माया के आवरणों से मुक्त होकर स्वयं को पहचान ले कि वह आत्मा है जो स्वयं चेतन है तथा उस महाचेतन (परमात्मा) का अंश है, और वह स्वंय उससे मिलकर परमात्मा बन सकता है । मुण्डकोपनिषद में भी यही कहा है –

" स यो ह वै तत्परमं ब्रह्म वेद ब्रह्मैव भवति " 1

अर्थात् जो कोई उस परब्रह्म को जान लेता है वह ब्रह्म ही हो जाता है। कठोपनिषद में भी आया है :

यदा सर्वे प्रमुच्यते कामायेऽस्य हृदि श्रिताः ।
अथ मर्त्योऽमृतो भवत्यत्र ब्रह्म समश्नुते ।। 2–

अर्थात जिस समय सम्पूर्ण कामनायें , जो कि इसके हृदय में आश्रय करके रहती है , छुट जाती है उस समय वह मर्त्य (मरण धर्मा) अमर हो जाता है और इस शरीर से ही ब्रह्म भाव को प्राप्त हो जाता है ।

1:– मुण्डकोपनिषद, द्वितीय खण्ड, श्लोक–9

2:– कठोपनिषद, अध्याय–2, तृतीय वल्ली, श्लोक –14

कबीर ,दादू एवं अखा आदि संतों की जो शिक्षा है वह प्राचीन काल से चली आ रही भक्ति परंपरा का ही अनुसरण है । यह तो एक निश्चित और अटल मार्ग है ,जो कभी बदला नही ,परंपरा से चला आया है तथा जिसे कोई घटा –बढ़ा नहीं सकता । व्यक्तिगत रुप से हम इसका अनुभव प्राप्त कर सकते है ।

हजारीप्रसाद द्विवेदी ने इस संदर्भ में उचित ही कहा है " मुसलमानी धर्म के वाह्याचार का खंडन हो या हिन्दू मत के ,उन्होंने अपने पूर्ववर्ती अक्खड़ योगियों की भाँति सहज खंडन के लिए खंडन नहीं किया । उनका केन्द्रीय भाव भक्ति था । वे भक्ति को प्रधान मानते थे । उस के रहने पर वाह्याचार का होना न होना गौण बात थी । ऐसा जरुर है कि वे भक्ति की प्राप्ति के बाद वाह्याचार का स्वंय नष्ट हो जाना जैसी बात पर विश्वास करते हैं । उनके मत से भक्ति और वाह्याचार का संबंध सूर्य और अन्धकार का–सा है । एक साथ दोनों नहीं रह सकते । " 1 –

कबीर के संबध में हिन्दी के कई विद्वानों ने अभ्यासपूर्ण ग्रन्थ लिखे हैं । इनमें प्रमुख है – श्यामसुन्दर दास ,पीताम्बरदत्त बड़थ्वाल , अयोध्या सिंह उपाध्याय ,हजारी प्रसाद द्विवेदी ,परशुराम चतुर्वेदी , राम कुमार वर्मा ,गोविन्द त्रिगुनायत, विजयेन्द्र स्नातक इत्यादि ।

इन विद्वानों ने कबीर एवं दादू दयाल के तत्वदर्शन की बहुत प्रभावपूर्ण रूप से आलोचना की है। ऐसे महान विद्वानों ने जिस पर अधिकार पूर्ण विवेचनायें की है, वहाँ मैंने कदम रखने का साहस किया है , इसका प्रमुख कारण यह है कि कबीर , दादू एवं अखा के व्यक्तित्व ने मुझे बहुत आकृष्ट किया है ।

कबीर , दादू एवं अखा के साहित्य का अनुशीलन करते हैं तब तक

1:– कबीर, पृ.– 121, पाँचवां संस्करण, सन् 1987, राज कमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पटना

बात विशेष रुप से परिलक्षित होती है कि कबीर का साहित्य स्वानुभव के आधारपर उभरा हुआ ज्ञानकुंज है , जो हम निम्नांकित उदाहरणों से समझ सकते हैं ।

कबीर – मैं कहता आंखिन देखी , तू कहता कागद की लेखी ।
मैं कहता सरुझावनहारी , तू राख्यो अरुझाई रे ।।1।।

* * *

दादू – दादू देखा दीदा सब कोई कहत शुनीदा ।2।

* * *

अखा – अनुभव जे मोटा तणो आपा पर नहि जे विखे ।
आप गलियुं आप मॉंहे द्वन्द्वातीत रहया सुखे ।।3।।

रामचरितमानस में तुलसीदास जी भी काकभुशुण्डि जी के माध्यम से यह स्पष्ट कर देते हैं कि राम के इस अद्भुत स्वरुप के बारे में कोई भी बात कल्पना से बढ़ा–चढ़ाकर नहीं कही गई है। यह सब उन्होंने अपनी आंतरिक ऑंख से देखा है । उनका यह निजी अनुभव है –

कहेऊँ न कुछ करि जुगति बिसेषी ।
यह सब मैं निज नयनन्हिं देखी ।।4।।

1:–कबीर साहब की शब्दावली, भाग–1, चितावनी और उपदेश, शब्द –78, साखी–1, बेलबीडियर प्रेस ,इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित , सन् 1990

2:– दादू दयाल की बानी, भाग–1, सुमिरन को अंग, साखी– 71, बेलबीडियर प्रेस ,इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित , सन् 1963–74

3:–अखेगीता, कडवुं–15

4:– राम चरित मानस–7–90 (ख) 1

निज अनुभव अब कहउँ खगेसा।

बिनु हरि भजन न जाहिं कलेसा ।।1।।

वेद , उपनिषद एवं गीता आदि शास्त्रों के रचयिता जिस प्रकार अपने अपने स्वानुभव समस्त मानव समाज के हितार्थ व्यक्त करते रहे , इसी प्रकार कबीर ,दादू, आदि संत भी स्वानुभव के पश्चात अपना दर्शन लोकहितार्थ प्रकट करते हैं । जिस प्रकार वेद , उपनिषद आदि के ऋषि–मुनियों नें परम–तत्व के दर्शन करके उसकी अभिव्यक्ति की इसी प्रकार संतों ने भी किया ।

कबीर , दादू एवं अखा आदि संतों ने पूर्ववर्ती ग्रंथों–पोथियों का अध्ययन करके अपना निष्कर्ष नहीं निकाला था । किन्तु व्यक्तिगत साधना से इस रहस्यपूर्ण विश्व की उत्पत्ति, रचना , उसका संचालन , उसका रचयिता , उसका स्वरुप इत्यादि विषयों का जो दर्शन प्राप्त हुआ वही हमारे संमुख प्रस्तुत किया । ऋषि– मुनियों के दर्शन और संतों के स्वानुभावों को सच्चे स्वरुप में समझने के लिये जिन साधना मार्गों का अवलम्बन ऋषि– मुनि या संतों ने किया था उसी मार्ग पर चलने वाले साधक को आज भी इसी प्रकार का तत्वदर्शन हो सकता है ।

कबीर , दादू एवं अखा आदि संतों को हमें इसी दृष्टि से देखना चाहिये । कबीर , दादू एवं अखा ने जो कुछ कहा अपने आत्मदर्शन के बाद कहा। उन्होंने शास्त्र का विधिवत अध्ययन किया हो , ऐसा कहीं भी देखने को नही मिलता । उनका पारिवारिक वर्तल भी ऐसा था कि उनको हमारे शास्त्रों के विधिवत संस्कार मिलना संभव नहीं था । फिर भी आत्मा – परमात्मा जैसे गहन विषय संबंधी उनका दर्शन वेद , उपनिषद , एवं गीता आदि के दर्शन से साम्य रखता है । इसका कारण यही है कि आत्म दर्शन

1:– राम चरित मानस– 7–88 (ख) 3

में स्वानुभाव के कारण ही साम्यता हो सकती है। निम्न उदाहरणों में हम संतों के स्वानुभाव एवं प्राचीन शास्त्रों में पाई गई साम्यता को देख सकते हैं। यजुर्वेद के इस संबधित विचार," उस परमेश्वर ने सारे संसार को पैदा किया है। 1–

" वही हम सबका स्वामी है " ।2।

" उस परमात्मा की प्रशंसा करो जिसने सारी दुनिया बनाई "।3।

कबीर – एक नूर ते सभु जगु उपजिया कउन भले को मंदे ।। 4।।

दादू – आए एकंकार सब, सांई दीए पठाइ
आदि अंत सब एक है दादू सहजि समाइ ।।5।।

* * *

दादू – आए एकंकार सब, सांई दीए पठाइ।
दादू न्यारा नांव धरि, भिंनि भिंनि है जाइ ।।6।।

* * *

अखा – कूटस्य आत्मा ब्रह्म केवल, तेहनो सर्व पसार,
जेहने विशेषण एके न लागे, ने विलसी रह्यो संसार ।7।

इसके अतिरिक्त इशोपनिषद में परमात्मा के स्वरुप संबंधी विचारों के साथ कबीर, दादू एवं अखा के पदों के साथ तुलना करने से हमें दार्शनिक साम्यता स्पष्ट रुप से दिखाई देती है।

1:– यजुर्ववेद (29–9) 2:– यजुर्ववेद (13–4)

3:– ऋग्वेद (8–5, 8–6) 4:– आदि ग्रंथ, पृ. 1349

5:– दादू दयाल ग्रंथावली, 29–दया नृवैरता को अंग, साखी – 24, ले. परशुराम चतुर्वेदी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, संवत 2023 वि.

6–वही, साखी– 23 7– अखे गीता, कडवुं–18

1— तदेजति तन्नेजति तद्दूरेतद्वदन्तिके ।1।

* * *

कबीर — नैड़े थैं दूरि दूरि थै नियरा जिंनि जैसा करि जाना ।।2।।

* * *

दादू — घटि घटि दादू कहि समझावै, जैसा करै सो तैसा पावैं ।।3।।

* * *

अखा — दूर जाने तिसे दूर हैरे । अखा झोबाझोब आंहि ।।4।।

* * *

2— अपाणि पादो जवनो ग्रहीता पश्चत्यचक्षु : स श्रणोत्यकर्ण : ।।5।।

* * *

कबीर — बिन मुख खाइ चरन बिन चालै बिन जिभ्या गुण गावै ।।6।।

* * *

दादू — बिन रसना जहँ बोलिये, तहँ अंतरजामी आप ।
बिन स्रवनहुँ साई सुनैं, जे कुछ कीजै जाप ।।7।।

1:—ईशोपनिषद, मन्त्र—5

2:—कबीर ग्रन्थावली,राग गौड़ी, पद —8, सं. बाबू श्यामसुन्दर दास,नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित ।

3—दादू दयाल की बानी,भाग —1,13,—सॉच कौ अंग,पद—195,बेलबीडियर प्रेस,इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई,

4—झूलणा—26— 5—श्वेता श्वतरोपनिषद—3/19

6—कबीर ग्रन्थावली,राग रामकली,पद —159,सं.बाबू श्यामसुन्दर दास,नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

7—दादू दयाल की बानी, भाग —1,4—परचा को अंग, साखी—28,बेलबीडियर प्रेस , इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई.

अखा – बीनु नेनुं का देखना बीन श्रवनुं की धुन्य ।
बीन रसना का बोलना एकु नहीं अखा चेहेन ।।1।।

* * *

नानक – अखी बाझहु वेखणा विणु कंना सुनणा।
पैरा बाझहु चलणा विणु हथा करणा ।।
जिभौ बाझहु बोलणा इउ जीवत मरणा।
नानक हुकुम पछाणि कै तउ खसमैं मिलणा।।2।

* * *

तुलसीदास – बिनु पद चलइ सुनइ बिनु काना ।
कर बिनु करम करइ बिधि नाना ।।3।।

* * *

3– स यथा सैन्धवखिल्य उदके प्रास्त उदकेमेवानुविलीयते ।4।

* * *

कबीर – लूँण बिलगा पाणियाँ पाँणी लूँण बिलग ।।5।।

* * *

दादू – ज्यूं जल पैसे दूध में ,ज्यूँ पानी में लौण ।
ऐसे आतम राम सौं , मन हठ साधे कौण ।।6।।

1:– वि. वे. अंग , साखी –8 ,अक्षय रस, पृ. 193, सं. कुँवर चंद्र प्रकाश सिंह, म. स. वि., बडोदा द्वारा प्रकाशित ,सन् 1963 ई.

2:– आदि ग्रंथ, माझ वार, महल्ला–2 , पृ.–139

3– राम चरित मानस ,बाल काण्ड, 117.3

4:–बृ. उ. 2/4/12

5:–कबीर ग्रंथावली,5– परचा कौ अंग, साखी–16, संपादक बाबू श्यामसुंदर दास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

6:– दादू दयाल की बानी, भाग–1, 2– सुमिरन कौ अंग, साखी –76, बेलबीडियर प्रेस इलाहाबाद ,द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई.

अखा — लूँण तो जलमां जइ जल थयुं,
त्यारे लूणपणानुं नखोद गयुं ।
जलनुं लूण ते जलमां खपे अखा,
हरिनादास ते हजूरमां जपे ।।1।।

इसके अतिरिक्त ब्रह्म के स्वरुप निरुपण, जीव, जगत की अनित्यता, गुरु, बाह्याडम्बरों की अनावश्यकता, पुस्तकीय ज्ञान का विरोध, जाति, वर्ण आदि की निरर्थकता, वैराग्य, भक्ति, सत्संग–महिमा, सत्य, प्रार्थना, संयम आदि विषयों पर वेद, उपनिषद, गीता आदि शास्त्रों तथा कबीर, दादू एवं अखा की कृतियों में पर्याप्त वैचारिक साम्यता पायी जाती है। इसका प्रधान कारण यह है कि ईश्वर को मिलने का मार्ग एक ही है। कोई भी जिज्ञासु किसी भी काल, किसी भी स्थान या देश में गुरु के मार्गदर्शन से ईश्वर को प्राप्त करना चाहेगा तो उसे समान प्रकार के अनुभव होंगे। इसलिये हजारों सालों पहले लिखे गये वेदों, उपनिषदों तथा कबीर, दादू एवं दूसरे संतों में हम वैचारिक साम्यता पाते हैं।

दर्शन — शास्त्र के ग्रन्थ और सन्तमत के साहित्य के अध्ययन से ज्ञात होता है कि आत्मा–परमात्मा संबंधी ज्ञान, जीव और परमात्मा की एकता तथा जीवात्मा के बंधनों से मुक्ति एतद् विषयक ज्ञान केवल गुरु परंपरा से ही उपलब्ध हो सकता है। वेद, उपनिषद, गीता आदि दर्शन शास्त्र स्वानुभव आधारित अत्यंत प्रमाणिक ग्रंथ है, बहुत ही स्पष्ट रुप से कहा गया है।

न नरेणावरेण प्रोक्त एवं सुविज्ञयो बहुत चिंत्यमानः ।
अनन्यप्रोक्ते गतिरत्र नास्त्यणीया–हभतर्क्यमणु प्रमाणात् ।।2।।

1:— छप्पा–737

2:— छान्दोग्य उपनिषद– 4,9,3

कबीर – कबीर सतगुरु नॉ मिला , रही अधूरी सीष ।
स्वांग जती का पहरि कर ,घरि घरि मॉगे भीष ।। 1 ।।

* * *

सतगुरू सांचा सुरिवॉं, लातैं लोहिं लुहार ।
कसणों दे कंचन किया, ताइ लिया तत्सार ।।2।।

* * *

बिन सतगुरु नर भरम भुलाना
सतगुरु सब्द का मर्म न जाना ,भूलि परा संसारा ।।3।।

* * *

दादू – दादू सोई मारग मन गह्या , जिहि मारग मिलिए जाइ ।
बेद कुरानौ ना कह्या , सो गुर दीया दिषाइ ।।4।।

* * *

अखा – हरी कीया तब जानिये जब हरीजनसुं होये प्यार ।
राम सुतका कोकड़ा हरीजन ताका तार ।। 5 ।।

1:– कबीर ग्रंथावली, 1– गुरुदेव कौ अंग, साखी–27, सं. श्यामसुन्दर दास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित

2:– वही–साखी–28

3:– कबीर साहब की शब्दावली, भाग–1, चितावनी और उपदेश, साखी–1, बेलबीडियर प्रेस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1990 ई.

4:– दादू दयाल, 1–गुरु देवजी कौ अंग, सा.–79, सं. परशुराम चतुर्वेदी, नागरी प्रचारिणी सभा वाराणसी द्वारा प्रकाशित सन् 2023 वि.

5:– अक्षयरस, साखियॉं, 32–कीपा अंग, पद–1, सं. कुँवर चंद्रप्रकाश्स सिंह, म. स. वि. ,बड़ौदा द्वारा प्रकाशित, सन् 1963 ई.

नानक — कहुँ नानक प्रभु इहै जनाई ।
बिन गुर मुकति न पाईए भाई ।।1।।

इसके अतिरिक्त मुण्डक उपनिषद में कहा गया है —
" भद्र — पुरुषों से जो गुरु समान है , सुना है कि बिना गुरु की दीक्षा के हम अपनी वास्तविकता का अनुभव नहीं कर सकते ।"

श्रुतं होष में भगवद्दृशेभ्य आचार्यद्वैव ।
विद्या विदिता साधिष्ठं प्रापयतीति ।।2।।

तदोपरान्त वेदों आदि ग्रंथों पोथियों एवं बाहरी आडम्बर का खण्डन भी हम सभी शास्त्रों में स्पष्ट रुप से देख सकते हैं ।

ऋग्वेद के पहले मंडल में तथा श्वेताश्वर उपनिषद में कहा गया है," जो मनुष्य उस अविनाशी परम आकाश ' परमात्मा ' को , जो ऋचाओं ' सूक्तों ' का तात्पर्य है तथा जिसमें सब देवता स्थित हैं, नहीं जानता , वह वेदों का क्या करेगा। जो उसे जानते हैं , वे ही शांतिपूर्वक रहते हैं ।"3—

ऋचो अक्षरे परमे व्योमन्
यस्मिन्देवा अधि विश्वे निषेदुः ।
यस्तं न वेद किमृया करिष्यति
च इवद्विदुस्त इमें समासते ।।4।।

1:— गौंण, महल्ला—5, पृ. 864 आदि ग्रंथ

2:— मुण्डकोपनिषद, पहला मुण्डक, दूसरा खण्ड, श्लोक 7,12

3:— ऋग्वेद,1 मण्डल, 164—सूक्त, 39—मंत्र

4:— श्वेताश्वतरोपनिषद, अध्याय—4, श्लोक—8

कबीर , दादू , एवं अखा में भी हम वही भाव पाते हैं ।

कबीर – बेद पुरान पढ़त अस पॉडे , खर चंदन जैसें भारा ।
रांम नाम तत समझव नॉहीं , अंति पड़ै मुखि छारा ।।1।।

*   *   *

दादू – अलिफ एक अल्लाह का , जे पढि करि जाणै कोइ ।
कुरान कतेबा इलम सब , पढ़ि करि पूरा होइ ।।2।।

*   *   *

दादू – पढ़ि पढ़ि थाके पंडिता , किनहुँ न पाया पार ।
कथि कथि थाके मुनि जना, दादू नॉइ अधार ।।3।।

*   *   *

दादू – षट दरशन द्वून्यूं नहीं, निरालंब निज वाट ।
दादू येकै आसिरै , लंघैं ओघट घाट ।।4।।

*   *   *

अखा – तेर कांड मायानु जाळ, कर्म फळ ने जीव, इश्वर, काळ
ए सर्व घाट बेसार्यु वेद , त्रि–पद कल्पी कीधा भेद ,
अखा अटके नहि ते तेर , जे चौंद बोली चाल्यो सुंसेर ।।5।।

1:–कबीर ग्रंथावली, राग गौड़ी, पद–39, सं. श्यामसुंदर दास काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित,

2:– दादू दयाल की बानी, भाग–1, 2– सुमिरन कौ अंग, साखी–89 बेलबीडियर प्रेस द्वारा प्रकाशित, सन् 1984

3:– वही. साखी– 87

4:– दादू दयाल , मधि को अंग, साखी–43, सं. परशुराम चर्तुवेदी, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित , सं. 2023 वि.

5:– अखा जी काव्यकृतिओ, खण्ड–1, 44–वेद अंग, छपपा–504 स्वाती प्रेस द्वारा प्रकाशित , अहमदाबाद, 1988

अखा –[1]   अगम अगोचर कहिते सारे ,

पढ़ते पढ़ते पंडित हारे ।।1।।

आत्मा – परमात्मा का ज्ञान मानवीय प्रयत्न से स्वप्रयत्न से केवल ग्रन्थों – पोथियों के अध्ययन से संभव नहीं है । कबीर , दादू , अखा आदि संतों में हम वही दृष्टिकोण पाते हैं ।

न वैदययाध्ययनैर्न दानैर्न च क्रियाभिर्नतपोभिरुग्रे ।
एवं रुपः शक्य अहं नृलोको द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर ।।2।।

* * *

थे तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायंत उपासते ।।3।।

* * *

रामानन्द – पूजन चाली ब्रह्म ठाइ ।
सो ब्रह्मु बताइओ गुर मन ही माही ।।4।।

* * *

कबीर – केतिक पढ़ी गुनि पचि मुवा,
जोग जज्ञ तप लाय।
बिन सतगुरु पावै नहीं ,
कोटिन करे उपाय ।।5।।

1:– अक्षयरस , जकड़ी–20, सं. कुँवर चंद्रप्रकाश सिंह, म. स. वि. , बड़ौदा द्वारा प्रकाशित सन् 1963 ई.

2:– गीता, 11–48

3:– गीता, 12–6

4:– वसंतु, रामानन्द जी, पृ. 1195, आदि ग्रंथ

5:– कबीर साखी संग्रह, पृ. 11–124

कबीर — पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुवा , पंडित भया न कोय ।
एकै आषिर पीव का , पढ़ै सु पंडित होइ ।।1।।

* * *

दादू — दादू केते पुस्तक पढ़ि मुए , पंडित वेद पुरान ।
केते ब्रह्मा कथि गये , नांहिन राम समान ।।2।।

* * *

अखा — पढ़ते पीयु न पाया कोइ,
ज्युं पढीअे त्युं दीसे दोइ ।।3।।

तुलसीदास वेद पुराण तथा अन्य शास्त्रों के प्रकांड पंडित हाते हुये भी केवल पुस्तकों के पठन — पाठन या शास्त्रीय वाद विवाद को महत्व नहीं देते थे । वे सगुण मार्गी होते हुये भी सन्तों के विचारों और उनके विचारों में अद्‌भुत साम्यता पायी जाती है ।

कीबे कहा , पढ़िबे को कहा फलु , बूझि न वेद को भेदु बिचारैं ।
स्वारथ को परमारथ को कलि कामद राम को नामु बिसारैं ।
बाद —बिबाद बिषादु बढाइ कै ,छाती पराई औ अपनी जारैं ।
चारिहु को , छहु को, नव को , दस — आठ को पाठु —कुकाठु ज्यों फारै ।।4

1:— कबीर ग्रंथावली, 19—कपणीं बिना करणीं कौ अंग, साखी—4 सं. श्यामसुन्दर दास, काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित,

2:— दादू दयाल, 13—सॉंच को अंग, साखी — 87 सं. परशुराम चर्तुवेदी, नागरी प्रचारिणी सभा , वाराणसी द्वारा प्रकाशित सं. 2023 वि.

3:— अक्षयरस, जकड़ी—24 . सं. कुँवर चन्द्रप्रकाश सिंह, म. स. वि. , बड़ौदा द्वारा प्रकाशित, सन् 1963 ई.

4:— कवितावली, उत्तरकाण्ड— 104

महर्षि कपिल – प्रणीत सांख्य दर्शन अत्यंत प्राचीन है । सांख्य योग के सृष्टि के प्रमुख तत्व सम्बन्धी चिन्तन संतों ने ग्राह्य रखे हैं । उनका उनसे कोई विरोध नहीं है, क्योंकि सांख्य – दर्शन नें सृष्टि के मूल तत्वों संबंधी जो दर्शन प्रस्तुत किये हैं , वह सृष्टि के भौतिक तत्वों का विश्लेषणात्मक पूर्ण दर्शन है । सांख्य – स्वीकृत सृष्टि रचना संबंधी विचारों को कबीर , दादू एवं अखा ने स्वीकार किए हैं ।

इसके अतिरिक्त सांख्य दर्शन के अनुसार त्रिविध तापों से आध्यात्मिक निवृत्ति ही मोक्ष है, जिसे ज्ञान के द्वारा 1– जीवितावस्था 2– में ही पाया जा सकता है ।

यही कबीर , दादू ,अखा आदि संतों का कहना है , यदि मृत्यु से पहले मरना आ जाये तो मनुष्य सदा के लिये जन्म –मरण से बच सकता है या मुक्ति प्राप्त कर सकता है । इसलिये संत जीते जी मरनें की महिमा करते हैं और उसकी रीति सिखाते हैं । मृत्यु में स्वाद है , पर यदि मनुष्य जीते जी मरे तब ही । कबीर का कथन है –

कबीर – कबीर जिसु मरने ते जगु डरै ,मेरे मन आनंद ।।
मरने ही ते पाइए पूरनु परमानंद ।। 3–

* * *

कबीर– जीवत मरै मरै फुनि जीवै ऐसे सुनि समाइया ।। 4

1:– बन्धों विपयंतात । 3/ 24

2:– जीवन्मुक्तश्व । 3/78

3:– सालोक कबीर जी, पृ. 1365, आदिग्रंथ

4:– गउड़ी, कबीर जी, पृ. 332 आदिग्रंथ

कबीर— कबीर ऐसा एकु आधु जो जीवत मिरतकु होय।।
निरभे होइ कै गुन रवै जत पेखउ तत सोइ।। 1—

* * *

दादू — दादू मारग साध का परा दुहेला जांणि ।
जीवत मृतक द्वै चलै ,राम नाम नीसांण ।। 2—

* * *

दादू— दादू तो तूं पावै पीव कौं ,जे जीवत मृतक होइ ।
आप गंवाए पीव मिलै ,यौं जानत सब कोइ ।। 3—

* * *

दादू— दादू जीवत ही मरि जाइए ,हरि माँहैं मिलि जाय ।
सांई का संग छाड़ि करि , कौण सहै दुष आइ ।। 4—

* * *

अखा — मरता पहेलो जाने मरी ,पछे जे रहेशे ते हरि । 5—

महर्षि पतंजलि द्वारा प्रणीत योग दर्शन को तात्विक ज्ञान का मूल आधार कपिल का सांख्य दर्शन है । भारतीय धर्म साधना में योग शब्द व्यापक अर्थ का द्योतक है ।महर्षि पतंजलि के अनुसार चित्त बृत्ति के निरोध को योग कहा जाता है। 6—

1:— सलोक कबीर, जी पृ. 1364, आदिग्रंथ

2:— दादू दयाल, जीवन मृतक को अंग, साखी—21 सं. परशुराम चतुर्वेदी, काशी नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी द्वारा प्रकाशित, सं. 2023 वि.

3:— वही, साखी—14

4:— वही, साखी — 24

5:— अखा जी काव्य कृतियों , खण्ड—1, 17— सुझ अंग, छपपा— 139, स्वाती प्रेस द्वारा प्रकाशित , अहमदाबाद, प्रथम आवृत्ति— 1988

6:— योग दर्शन, प्रथम अध्याय, सूत्र—2, पृ. 4

श्रीमद्भागवत् पुराण में भी मन के निग्रह को ही योग बताया है –

एष वै परमो योगो मनसः संग्रह : स्मृतः । ।1।।

हिन्दुओं में अष्टांग 2– योग के दूसरे अंग 3– नियम के आठ साधनों में पहला साधन शौच या पवित्रता है । अष्टांग योग की तैयारी के लिये शरीर का शौच कई युक्तियों द्वारा किया जाता है , जो निम्न है :

1–नेती कर्म 2–धोती कर्म 3– बस्ति कर्म 4 –नैलि कर्म 5–गज कर्म 6–मत्तौली कर्म ।

इन को करने के बाद योगी जन त्राठक कर्म करते है । जब यह अभ्यास पूरा हो जाय तो अपने ध्यान को अन्तर के चक्रों पर ले जाते हैं । इससे भुजंगम या कुण्डलिनी नाड़ी को जो सुषुम्ना का द्वार बन्द रखती है –जगाया जाता है और खेचरी मुद्रा के द्वारा जिह्वा से तालु के ऊपर के छिद्रों को बन्द करके भृकुटी के बॉए और घ्यान किए हुए चन्द्रमा से टपकते हुए अमृत का पान करना होता है ।

कबीर ,दादू ,अखा आदि संतों की रचनाओं में केवल इन कर्मो को करने से मुक्ति की प्राप्ति नहीं मानी गयी है । उनके अनुसार यदि मनुष्य मालिक की भक्ति नहीं करता तो ये सब कर्म निष्फल हैं । वे बताते हैं कि पूर्ण युक्ति के साथ षटकर्म करने वाले के हृदय में यदि मालिक की भक्ति नहीं है , तो वह चाण्डाल के समान है , इन कर्मो को करते हुए भी सतगुरु के बिना उसे सच्चा ज्ञान नहीं होता । इतनी सफाई होते हुए भी अन्तर का मैल कभी नहीं छूटता । नाम के बिना ये सब कर्म ,बाजीगर के तमाशे के समान हैं –

1:– भागवत् पुराण, स्कंध–11, अध्याय–20 , श्लोक–21

2:– योग के आठ अंग है : यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा , ध्यान और समाधि ।

3:– नियमों के आठ साधन – शौच, सच, संतोष, तप , विद्या, अभ्यास, होम , दान ओर श्राद्ध ।

रविदास —खटु करम कुल संजुगतु है हरि भगति हिरदै नाहि ।।
चरनारविंद न कथा भावै सुपच तुलि समानि ।।1 ।।

*   *   *

निवली करम भुअंगम भाठी रेचक पूरक कुंभ करै ।।
बिनु सतिगुरू किछु नाहीं सोझी नाहीं भरमे भूला बूड़ि मरै ।।
अंधा भरिआ भरि—भरि धोवै अंतर की मलु कदै न लहै ।।
नाम बिना फोकट सभि करमा जिउ बाजीगरो भरमिल भूलै ।।2।।

कबीर — काइआ मांजसि कउन गुना ।।
जउ घट भीतरि है मलनां ।।
लड़की अठसठि तीरथ न्हाई ।।
कउरापन तऊ न जाई ।।3।।

*   *   *

दादू — (दादू) भेष बहुत संसार में ,हरि जन बिरला कोइ ।
हरि जन राता राम सूँ ,दादू एकै सोइ।।4।।

*   *   *

जोगी जंगम सेवड़े ,बौध सन्यासी सेख ।
षट्दर्शन दादू राम ,बिन सबै कपट के भेख ।।5।।

1:— रवि दास जी, पृ. 1124,आदि ग्रंथ

2:— प्रभाती ,महल्ला—1, पृ. 1343 आदि ग्रंथ

3:— सोरठि, कबीर जी, पृ. 656, आदि ग्रंथ

4:— दादू दयाल की बानी, भाग—1, 14—भेष को अंग, साखी—13, बेलबीडियर प्रेस द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई.

5:— वही ,साखी—33

अखा — कर्म धर्म ए भ्रम ने भला , एके न रहे एकएकलां ।
कर्म त्याहॉ भ्रम अने भ्रम त्याहॉ कर्म ,
ज्यम बुधवहोजी धेनु चाटे चर्म ।।1।।

महर्षि पतंजलि के अतिरिक्त योग की यह चर्चा गोरखनाथ द्वारा प्रवर्तित नाथ संप्रदायों के ग्रन्थों में पूर्ण रुप से देखने को मिलती है ।

इन संतों ने नाथ संप्रदाय में प्रचलित शब्दावली —कुण्डलिनी —उत्थापन, खेचरी मुद्रा ,उनमनी अवस्था ,सुषुम्न नाड़ी ,इड़ा ,पिंगला ,आदि शब्दों का अपनी रचनाओं में प्रयोग किया है । लेकिन इसका तात्पर्य यह नहीं हो सकता कि वे नाथ—पन्थियों से प्रभावित थे । उन्होंने तो सिर्फ परंपरा से प्रचलित शब्दावली का प्रयोग किया है । संतों ने तो सहज और सरल साधना को स्वीकार किया है । कबीरदास आदि संत यौगिक क्रियाओं को बाह्याचार मानते थे । वे इन सारी कियाओं को सहजावस्था की प्राप्ति का कारण नहीं मानते थे । उनके अनुसार योगी या जंगम ,सब झूठी आशा लेकर ही साधना में लगे हुए हैं । जो अंतिम सत्य है वह भक्ति से ही प्राप्त हो सकता है :

दादू— दरसन दे दरसन दे ,हौं तौ तेरी मुकति न मॉगौं रे ।।
सिद्धि न मॉगौ रिद्धि न मॉगौ, तुमही मॉगौं गोबिन्दा ।।
जोग न मॉगौं भोग न मागौं ,तुमही मॉगौं देवजी ।
दादू तुम बिन और मॉगौ, दरसन मॉगौं देहुजी ।।2—

1:— अखानी काव्यकृतियों, खण्ड—1, 31— खल ज्ञानी अंग, छप्पा— 240 , स्वाती प्रेस द्वारा प्रकाशित , अहमदाबाद—7, सन् 1988 ई.

2:— दादू दयाल की बानी, भाग—2 , राग गौड़ा, पद—313, बेलबीडियर प्रस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई.

भाई रे विरले दोस्त कबीर के , यहु तत बार –बार कासों कहिये ।।
भांगण –घडण – संभारण –संग्रथ ज्यूँ राखै त्यूँ रहिये ।।
आलम – दुनी सबै फिरि खोजी हरि –बिन सकल अजानां ।
छह – दरसन –छयानबे – पाखण्ड आकुल किनहुँ न जानां ।।
जप–तप –संजम –पूजा –अरचा जोतिग जग बौरानां।
कागद लिख लिखि जगत भुलाना मन ही मन न समानां ।।
कहे कबीर जोगी अरु जंगम ए सब झूठी आसा ।
गुरु–प्रसाद रहौ चात्रिग ज्यों निहचै भगति निबासा ।।1।।

* * *

अखा – तीरथ कोहि हरिजन ने चरण ,क्रिपा हशे ते ग्रहसे शरण,
बारे मास हरिजन ने रुई , हरि बोलावे ते जन बदे ,
महामोटो हरिजन –परताप, अखा गाय हरि आपोआप ।।2।।

* * *

डॉ. सत्यनारायण उपाध्याय का भी ऐसा ही मानना है :

" यद्यपि कबीर ,दादू, नानक ,सहजोबाई आदि इन सभी संतों की वाणी में इड़ा ,पिंगला, कुन्डलिनी , षट्चक्र–भेदन ,अमृतकुंड ,अनहद, नाद, सुरति–निरति,नाद–बिन्दु आदि का लम्बा – चौड़ा विवरण मिलता है पर वह केवल रूढ़ि और परम्परित विचारधारा की सैन्द्धान्तिक अभिव्यक्ति मात्र है, उसका उनके जीवनदर्शन और व्यवहार–दर्शन से कोई संबंध नहीं है ।।3।।

1:– कबीर ग्रंथावली, राग गौड़ी , पद –34, सं. श्यामसुन्दर दास नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा प्रकाशित, सन् 1928 ई.

2:– अखानी काव्यकृतिओ, खण्ड–1, 12–तीर्थ अंग छप्पा– 81, स्वाती प्रेस द्वारा प्रकाशित, अहमदाबाद–1988

3:– दादू जीवन दर्शन और काव्य, डॉ. सत्यनारायण उपाध्याय, प्रस्तावना–(ख)

कबीर ,दादू दयाल, अखा जैसे संन्तों का अध्ययन एवं मुल्यांकन इसी भूमिका पर करना चाहिए । जबकि आधुनिक आलोचकों एवं विद्वानों ने कबीर , दादू एवं अखा को सामाजिक ,जातिगत आदि परिपेक्ष्य में ही देखने का प्रयास किया है ' वह एक पक्षीय है। संतों के साहित्य का अवगाहन हमें किसी परिस्थिति सापेक्ष के अन्तर्गत नहीं करना चाहिए क्योंकि जिस तरह प्राचीन काल में ऋषि–मुनियों ने निरपेक्ष रुप से संतों ने सत्य का दर्शन किया था। सामाजिक ,धार्मिक , परिस्थिति के कारण बाह्य क्रियाकांड , पाखंड इत्यादि जो समस्याएँ उस समय पैदा हो गयी थी , उनकी संतों के साहित्य में कटु आलोचना दिखाई देती है , लेकिन उनके लिये कोई उद्देश्य नहीं था । सत्यदर्शन में ये सब रुकावटें होंने के कारण ही उनकी विवेचना उनके साहित्य में पाई जाती है । सामाजिक और धार्मिक समस्याओं को सुलझाना उनका उद्देश्य नहीं था । उनका ध्येय केवल आत्मदर्शन था । निरपेक्ष भाव से उसी की साधना में लगे हुए दिखाई देते हैं ।वे इस संसार को स्वप्नवत मानते है । उनके अनुसार यह जगत अनित्य और नाशवान हैं ,वह बदलता रहता है , तो आज है वह कल नहीं । इस मृत्यु लोक में किसी वस्तु में स्थिरता नहीं है । यह रचना मृगजल के समान है। आदि संसार से संबंधित विचार संतों के है । इससे स्पष्ट होता है कि वे संसार की परिस्थति सुधारने में अमूल्य मानव जन्म खोना नहीं चाहते थे उनका ध्येय केवल आत्मा की उन्नति प्राप्त करना और उसको परमात्मा के साथ जोड़ना है ताकि जीव अपने जीवन काल में ही सब बन्धनों से मुक्त होकर परमात्मा का अनुभव प्राप्त कर लें तथा उससे मिलकर अभिन्न हो जाये ।

कबीर आदि संत हमें परमात्मा से कैसे मिलाप हो सकता है , उसका उपाय बताते हैं ।

इसलिये कबीर ,दादू एवं अखा आदि की रचनाओं में परमात्मा के मिलन मार्ग में जो रुकावटें हैं उसकी बड़ी कटु आलोचना निर्भीकता एवं आत्म विश्वास के साथ पाई जाती हैं ।

संसार की अनित्यता से संबंधित कबीर ,दादू ,एवं अखा के पद देखने से यह और भी स्पष्ट हो जाएगा :

नानक– जैसे जल ते बुदबुदा उपजें बिनसै नीत ।।
जग रचना तैसे रची कहु नानक सुन मीत ।।1।।

* * *

कबीर– कबीर इहु तनु जायेगा सकहु त लेहु बहोरि ।।
नांगे पावहु ते गए जिन के लाख करोरि ।।2।।

* * *

कबीर – कबीर जगु काजल की कोठरी अंध परि तिस माहि ।।
हउ बलिहारी बिन कउ पैसि जु नीकसि जाहि ।।3।।

कबीर जी संसार की सार हीनता एवं अनस्थिरता को ध्यान में रखते हुए बहुत ही मार्मिक शब्दों में कहते हैं :

का मांगूँ कुछ थिर न रहाई ,
देखत नैंन चल्या जग जाई ।।4।।

1:– सलोक , महल्ला –9, पृ. 1427, आदिग्रंथ

2:– सलोक , कबीर जी, पृ. 1365, आदिग्रंथ

3:– सलोक, कबीर जी, पृ. 1365 , आदिग्रंथ

4:– कबीर ग्रंथावली, राग गौड़ी, पद–94, सं. श्यामसुंदर दास, नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशित

संसार की क्षण भंगुरता की ओर हमारा ध्यान दिलाते हुए कहते हैं कि रावण के पास सुरक्षित राज्य था । उसकी पूरी लंका सोने की थी । समुद्र के समान गहरी खाई से घिरे लंका के दुर्ग थे किन्तु उसका भी अन्त हो गया :

इक लष पूत सवा लष नाती , ता रावन घरि दिवा न बाती ।
लंका सा कोट समंद सी खाई , ता रावन की खबरि न पाई ।।1।।

* * *

इसलिए अगर संसार का समस्त सुख मिल जाय तो भी हम उसका उपयोग कितने दिन कर सकते हैं ?
इसलिए कबीर कहते हैं –

राम थोरे दिन कौं का धन करनां ,
धंधा बहुत निहाइति मरनां ।।2।।

कबीर जी इस संसार को एवं संबंधियों के संबंध को भी क्षणस्थायी मानकर कहते हैं :

मेरी मेरी दुनिया करते ,मोह मछर तन धरने ।
आगे पीर मुकदम होते, वै भी गये यौं करते ।।
किसकी ममां चचा पुनि किसका , किसका पंगुड़ा जोई ।
यह संसार बजार मंडया है , जानैगा जन कोई ।।
यह संसार ढूँढ़ि सब देखा , एक भरोसा तेरा ।।3।।

1:– वही, पद–94

2:– वही, पद–99

3:– वही, पद–102

अन्य स्थान पर वे कहते हैं :

मानुष जनम सुधारो साधो ,
धोखे काहै बिगाड़ो हो ।
ऐसा समय बहुरि नहिं पैहों ,
जनम जुआ मति हारों हो ।।1।।

*　　*　　*

कबीर इह तनु जाइगा कवनै मारगि लाइ ।।
कै संगति करि साध की कै हरि के गुन गाइ ।।2।।

*　　*　　*

दादू — यहु सब माया मिर्ग—जल ,
झूठा झिल मिल होइ ।
दादू चिलका देखि करि ,
सति करि जाना सोइ ।।3।।

*　　*　　*

साहिब हैं पर हम नहीं ,सब जग आवै जाइ ।
दादू सुपिना देखिये , जागत गया बिलाइ ।।4।।

*　　*　　*

1:— कबीर साहिब की शब्दावली, भाग—1, चितावनी और उपदेश, शब्द—39, साखी—1, बेलबीडियर प्रेस इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित, सन् 1990 ई.

2:— कबीर जी, पृ. 1365, आदिग्रंथ

3:— दादू दयाल की बानी, भाग—1 , माया कौ अंग, साखी—2, बेलबीडियर प्रेस द्वारा प्रकाशित, सन् 1984 ई.

4:— वही, साखी—4

सुपिनैं सब कुछ देखिये ,
जागै तौ कछु नाहिं ।
ऐसा यहु संसार है,
समझि देखि मन माहिं ।।1।।

* * *

अखा – नाटक चाले माया तंणुं , सकळ जीव , शृंगार्या,घणुं ।
काल फेखे चौदे चोवटे ,एकने आपे एकने झटे ।
अखा वगुए माया –काळ जाग पंडित श्रीवंत –भूपाळ ।।2।।

उपर्युक्त पदों को देखनें से ज्ञात होगा कि कबीर , दादू एवं अखा का उद्देश्य क्या था ?

वे मनुष्य जन्म के इस दुर्लभ अवसर का अच्छे से अच्छा उपयोग करना सिखाते हैं । वे केवल मनुष्य को जन्म मरण के चक्कर से मुक्त करके उस परमतत्व के साथ मिलाप कराना चाहते हैं । जहाँ से सृष्टि के आदि काल वह (आत्मा) बिछुड़कर इस संसार चक्र की मायाजाल में फँस गया है । उन्होंने मनुष्य जन्म को सबसे ऊपर रखा है । वेदों आदि शास्त्रों में भी हम यही दृष्टिकोण देख सकते हैं। इसलिए हजारों सालों के बाद भी वेद , उपनिषद , एवं गीता का मार्गदर्शन अत्यन्त उपयोगी एवं जीवंत है । संतों का धार्मिक एवं सामाजिक दृष्टिकोण व्यवहारु है । वे इस नाशवान संसार का जीवात्मा की मुक्ति में कितना बाधक या सहायक है इसके आधार पर इसका मुल्यांकन करतें हैं । वास्तव में इस संसार की परिस्थिति , इसके

1:– वही, साखी–10

2:– अखानी काव्यकृतिओ, खण्ड–1, 46–माया अंग, छपपा–564, स्वाती प्रेस द्वारा प्रकाशित, अहमदाबाद–7, सन् 1988 ई.

संबंधों एवं वर्तमान जन्म को ही जीवन का आरम्भ और इस जन्म के अंत को ही जीवन का अंत समझ लेना , हमारी दृष्टि को बहुत सीमित और अपूर्ण बना देता है । समाज –सुधारक इस दृष्टिकोण को सन्मुख रखकर कार्य करता है । इस प्रकार केवल दृश्यमान जगत को ही पूर्ण या अंतिम समझ लेने से हमारा दृष्टिकोण और इससे निकलनें वाले नतीजे हमें गलत दिशा में ले जाते हैं ।

वास्तव में संतों की दृष्टि इन दोषों से मुक्त होती है । वे संसार की वास्तविक परिस्थति जानते हैं । वे द्रष्टा और ज्ञाता होते हैं । अतः उनको निरे समाज –सुधारक या विचारक सिद्ध करना उनके साथ अन्याय और उनको सीमित दृष्टिकोण में देखना है । संतों के कथन का आधार संसार की निरन्तर बदलती रहने वाली परिस्थितयाँ नहीं ,बल्कि परम सत्य का सहज अनुभव है । वे जीवन को उसकी सम्पूर्णता और निरन्तरता में देखते हें । यही कारण है कि संसार में सब सिघान्त बदलते रहते हैं ,पर सन्तों महात्माओं का सिद्धान्त कभी नहीं बदलता ।

डॉ . पारसनाथ तिवारी के विचार इस संदर्भ में दृष्टव्य है –" बीजक में खण्डन पक्ष की उक्तियाँ अपेक्षाकृत अधिक हैं ,अतः लोग उनके समाज –सुघारक रुप को ही ले उड़े ,और इसी रुप में कबीर की ख्याति भी विदेशों में फैली । उन्हीं से प्रभावित होकर अनेक भारतीय विद्वान भी कबीर को सर्वघर्म समन्वयकारी समाज सुघारक मानने लगे । उनका विचार है कि हिन्दू मुस्लिम धर्मों की कुरीतियॉ दिखाकर वे एक समझौते का मार्ग दिखाना चाहते थे, जिससे देश की एकता सुरक्षित रह सके । समाज –सुघारक होना बुरी बात नहीं है किन्तु कबीर समाज –सुघारक से भी बड़े भक्त थे और उन्हें कोरा समाज सुघारक मानना उनके साथ अन्याय करना है । उन्होंने मनुष्य को मनुष्य मानकर उसका मूल्यांकन करना बताया है । जातिगत, कुलगत तथा

सम्प्रदाय गत विशेषताएँ उनकी दृष्टि में गौण हैं । वस्तुतः वे उस ऊँचे धरातल पर खड़े थे जहाँ न मनुष्य हिन्दू है न मुसलमान । वह केवल मनुष्य है निःसन्देह यह वैचारिक धरातल इतना ऊँचा है न केवल हिन्दू –मुसलमानों को बल्कि समस्त संसार को एकता के सूत्र में बाँध सकता है । फिर भी उनकी एकता की बात वैसी नही है जैसी किसी समाज सुधारक की होती है । समाज सुधारक की दृष्टि में एकता साधन है । कबीर मानव एकता का प्रतिपादन इसलिए नहीं करते कि उनके द्वारा उन्हें किसी इतर उददेश्य की पूर्ति करनी है । राजनीतिक दृष्टिकोण कबीर के सामने था ही नही । वे एकता का प्रतिपादन इसलिए करतें हैं कि वही रास्ता ठीक है । इसके आधार पर हम यह भले ही कह सकते हैं कि उनके दिखलाए हुए मार्ग पर चलने से ही सुधार हो सकता है ,किन्तु केवल इतने से ही हम उन्हें समाज सुधारक नहीं मान सकते । उनकी भक्ति का क्षेत्र वस्तुतः इतना विशाल और व्यापक है कि हम उन्हें सहज ही समाज सुधारक मान सकतें हैं ,किन्तु सुधारवाद उनका साध्य नहीं ,वह आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शब्दों में केवल "फोकट का माल है " (बाइ प्राडक्ट) जो भक्ति के बिरते पर उन्हें मिल गया था । 1–

सारांश यह है कि कबीर ,दादू दयाल ,और अन्य संतों के परम तत्व के दर्शन हेतु जो साधना मार्ग प्राप्त हुआ था वह गुरु परंपरा से प्राप्त हुआ था । इसलिए मैं इस शोध प्रबंध में स्पष्ट करना चाहती हूँ कि इन संतों के तत्वदर्शन में कहीं पर भी शैव ,वैष्णव ,नाथ आदि सम्प्रदाय विशेष का प्रभाव नहीं देख सकती क्योंकि यह एक ऐसी परंपरा है जो हजारों सालों से चली आ रही है । इसमें कोई परिवर्तन या व्यक्ति विशेष का प्रभाव खोजने का प्रयत्न करना व्यर्थ वितंडावाद होगा।

1:– डॉ. पारसनाथ तिवारी, कबीर वाणी, p-67, नवॉ संस्काण, 1991, राका द्वारा प्रकाशित, इलाहाबाद।

गीता में भगवान श्रीकष्ण कहतें हैं कि यह योग परमात्मा से मिलने का मार्ग स्वयं परमात्मा के अंश –जीवात्मा को अपने मूल स्वरुप में मिलन हेतु स्वयं परमात्मा ने ही बनाया है । यह परंपरा से आज तक अक्षुण्ण रुप से चला आ रहा है ,जैसे गीता में उल्लिखित है :–

इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम् ।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत ।।1।।

---

1 :– गीता, 4-1.